ओ३म्

**‘सब मनुष्यों की उन्नति ही देश की उन्नति है’**

-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।

किसी भी परिवार, समाज व देश की उन्नति के लिए कुछ नियमों व अनुशासन का पालन करना होता है। परिवार की उन्नति से समाज की उन्नति होती है और समाज की उन्नति देश की उन्नति का आधार है। आजकल हम समाज में देखते हैं कि हर व्यक्ति अपनी ही उन्नति में सक्रिय है। कुछ लोग तो उन्नति के लिए उचित साधनों का ही प्रयोग करते हैं परन्तु कई अनुचित साधनों का प्रयोग करने में भी संकोच नहीं करते जिनके उदाहरण आजकल टीवी चैनल व समाचार पत्रों में समय-समय पर दृष्टिगोचर होते रहते हैं। आज बड़े-बड़े पदों पर कार्यरत लोगों के बारे में यह नही कहा जा सकता कि यह सब निष्पक्ष, सच्चे व सदाचारी, भ्रष्ट नहीं हैं। ऐसे लोग किसी के साथ कोई भेदभाव या पक्षपात नहीं करते, ऐसी स्थिति नहीं है। हमने तो राजनैतिक दलों में यहां तक अनुभव किया है कि उनकी नीति का आधार सत्य व देशहित पूरी तरह से न होकर सत्ता को कैसे प्राप्त किया जाये, भले ही वह देश के लिए हितकारी हो या न हो, उसको अपने दल की नीति व सिद्धान्त बना दिया जाता है। तुष्टिकरण भी इनमें से एक है। ऐसी स्थिति में राजनैतिक दलों से यह उम्मीद नहीं की जा सकती कि वह किसी ऐसी बात को स्वीकार कर लेंगे जो उनके राजनैतिक हितों के विपरीत हो, भले ही वह विचार, मान्यतायें व योजनायें देश हित में ही क्यों न हो? यह स्थिति सभी दलों की न्यूनाधिक है।

**मनमोहन कुमार आर्य**

 **समाज की उन्नति का एक स्वर्णिम नियम है कि मनुष्य को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट नहीं रहना चाहिये अपितु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।** यह आर्य समाज का दसवां नियम है। इस नियम पर यदि विचार किया जाये तो यह पूरी तरह उचित प्रतीत होता है। परन्तु क्या शिक्षित धनाड्य लोग, बड़े कारोबारी, राजनैतिक दलों के लोग व बड़े-बड़े लाभकारी पदों पर कार्यरत लोग, उद्योग पति आदि इस नियम को अपने जीवन में लागू करने या आचरण में लाने के लिए सहमत हो सकते हैं? हमें लगता है कि इस नियम का सत्य होना व देश हित में होने पर भी सभी देशवासी वर्तमान वातावरण में इस नियम को निजी जीवन में स्वीकार नहीं करेंगे। इसी कारण देश में सामाजिक असमानता, भेदभाव, पक्षपात, लूट-खसोट, भ्रष्टाचार, बेईमानी, बेरोजगारी, अनिर्धनता व सरकार द्वारा सही निर्णय न ले पाने की स्थिति आदि समस्यायें हैं। अब स्थिति यहां आकर रूकती है कि जो लोग उपर्युक्त नियम को गुण दोष के आधार पर तो स्वीकार करते हैं परन्तु अपने हितों व स्वार्थों से ऊपर उठकर अपना आचरण व व्यवहार नहीं सुधारते। लोगों की मानसिकता बदल कर उन्हें इस नियम के अनुरूप बनाने या सुधारने का कार्य करना ही अभीष्ट कार्य है।

 इसका एक तरीका तो हमें दीर्घ अवधि की योजना बनाकर उसे क्रियान्वित करना है। वह योजना यह है कि हमें अपनी शिक्षा की वर्तमान पद्धति में संशोधन व परिवर्तन करना होगा और उसे संस्कारो पर आधारित बनाना होगा। यहां हमें सभी बुद्धिजीवियों से इस कार्य में सहयोग की आवश्यकता होगी। अधिकारी विद्वानों की गोष्ठियां व कार्यशालायें आदि प्रश्नगत विषय पर आयोजित करनी होंगी। हमारा अपना विचार है कि हमें गुरूकुल शिक्षा पद्धति के सिद्धान्तों का वर्तमान शिक्षा प्रणाली में समावेश करना होगा। सबसे प्रथम तो हमें वेद, दर्शनों व उपनिषदों पर आधारित आध्यात्मिक शिक्षा व योगाभ्यास आदि को अनविार्य बनाना होगा। सभी मत-मतान्तरों के अनुयायियों के बच्चों को आरम्भ वा प्रथम कक्षा से ही इस विषय का अध्ययन कराया जाना चाहिये। इस शिक्षा यज्ञ में सत्यार्थ प्रकाश व व्यवहारभानु आदि ग्रन्थों के भी उपयोगी अंशों का भी लाभ उठाया जाना उचित होगा। विद्यालयों में वर्तमान प्रार्थना प्रणाली को बदल कर सन्ध्या व हवन अनिवार्य किया जाना जिससे बच्चे को ईश्वर के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान प्राप्त हो तथा उन पर देश हित व समाज हित के संस्कार पड़े। इसके साथ मनुष्य के किस कर्म का क्या-क्या फल या परिणाम ईश्वर के द्वारा मिल सकता है, इस पर भी वेद व वेद सम्मत शास्त्रीय प्रमाण, तर्क, युक्तियां आदि को स्थान देना होगा। सभी विद्यालयों में प्रातःकालीन व पूर्वान्ह में यज्ञ हों जिसमें सभी अध्यापकों-अध्यापिकाओं व विद्यार्थियों की उपस्थिति अनिवार्य होनी चाहिये। इससे क्या होगा? जब बच्चों को ईश्वर के वैदिक व तर्क संगत स्वरूप जो कि उसका यथार्थ स्वरूप है, बताया जायेगा तो उनके मन, बुद्धि व आत्मा पर इसका कुछ न कुछ प्रभाव तो होगा ही। हमने भी सत्यार्थ प्रकाश आदि पुस्तकों को पढ़कर आत्मिक व बौद्धिक ज्ञान प्राप्त किया है। अन्य मतों के विचारों व मान्यताओं को भी जाना व समझा है। हमें वैदिक मान्यतायें पूर्ण तर्क संगत, प्रमाणिक व यथार्थ प्रतीत होती हैं। इन्हीं से सृष्टि की आदि से महाभारत काल पर्यन्त देश समस्याओं से मुक्त रहा है और आगे भी इन विचारों व वैदिक विचारधारा से मानव जाति ही नहीं अपितु प्राणि मात्र का हित व कल्याण होगा। यदि यह प्रयोग किया जायेगा, तो युवा होने पर आज का बच्चा जिसने छात्र जीवन में असत्य बोलने व असत्य आचरण न करने की शिक्षा ग्रहण की है व कुछ व अनेक ऐसी ही प्रतिज्ञायें, व्रत व संकल्प विद्यालय में लिए हैं, उनके प्रभाव से वह बुरे काम करने में आत्महनन व आत्मग्लानि तो अनुभव करेगा ही। इसका प्रभाव यह होगा कि हमारी भावी युवा पीढ़ी सच्चिरित्र होने के साथ ईश्वर के यथार्थ स्वरूप में विश्वास रखने वाली हमें प्राप्त हो सकेगी। यदि ऐसा नहीं करेंगे और वर्तमान शिक्षा पद्धति जारी रहेगी जिसके द्वारा ईश्वर व जीवात्मा के बारे में अधकचरा, अपूर्ण किंवा मिथ्या ज्ञान रखने वाले प्रायः नास्तिक युवा व नागरिक ही बनेंगे ओर खाओं, पिओं और जीवों की जीवन शैली पर चलकर देश में असमानता, विषमता व निर्धनता को बढ़ाते रहेंगे। हम यह अनुभव करते हैं कि देश में असमानता व विषमता, शोषण व अन्याय तथा पक्षपात आदि कम वा समाप्त करने के लिए शिक्षा सुधार का यह उपाय कारगर हो सकता है। भारत में कुछ राजनैतिक सिद्धान्त ऐसे स्वीकार कर लिये गये हैं जिनका आधार सत्य नहीं है जिस कारण नई-नई समस्यायें जन्म लेती रहती है और हम पत्तों पर पानी डालते रहते हैं जिससे जड़ सूखी रहने से उनका कोई सकारात्मक परिणाम सामने नहीं आता है।

 आईये, आर्य समाज के नियम पर पुनः दृष्टि डालते हैं। प्रथम भाग में कहा गया है कि मनुष्य को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट नहीं रहना चाहिये। इसका अर्थ यह भी है कि उन्नत व्यक्तियों को अपनी आध्यात्मिक व भौतिक उन्नति में ही सन्तुष्ट नहीं रहना है। अपनी उन्नति अच्छे कार्यों व आचरण यदि हुई है तो यह अच्छी बात है। यदि बुरे कार्यों से हुई है तो यह अच्छी बात इस लिए नहीं है कि इस प्रकार की उन्नति से अनेक लोगों के अधिकारों का हनन हुआ है। ऐसा इस लिए हुआ है कि गलत काम करने वाले नास्तिक होते हैं। वह यह समझते हैं कि ईश्वर है नहीं, यदि होता तो फिर अन्य अनुचित काम करने वाले धनाड्य व सुखी कैसे होते? ऐसे लोगों को अस्पतालों में जाकर देखना चाहिये। वहां बड़ेे-बड़े धनाड्य लोग भी उपचाराधीन मिलेंगे। रोगों की सर्वें रिर्पोट पर ध्यान देंगे तो ज्ञात होगा कि इस देश का प्रत्येक धनी व उन्नत व्यक्ति जिसकी आयु 40 वर्ष या इससे कुछ अधिक है प्रायः रक्तचाप, शुगर, डिप्रेशन, चिन्ताओं, क्लेशों, आशंकाओं व ऐसी ही अनेकानेक समस्याओं से ग्रसित है। क्या उन्नति का यही पैमाना या मापदण्ड है। धनिक व सम्पन्न किंवा उन्नत व्यक्ति को तो पूर्ण स्वस्थ होना चाहिये? ऐसा क्यों है, इसका मुख्य कारण उनका आचरण व व्यवहार है जिसमें मुख्य रूप से मिथ्याचरण, अधिक सुख देने वाले पदार्थों का भोग, अनियमित जीवन, रात-दिन पैसा कमाने व सुख भोगने में ही व्यतीत करना आदि कारण हैं। यदि व्यक्ति वैदिक जीवन पद्धति का अनुसरण करेगा, 5 नित्य कर्तव्यों वा यज्ञों का पालन करेगा, सद्ग्रन्थों का नियमित स्वाध्याय करेगा, अपना व्यवहार व आचरण सत्य पर रखेगा तो उसे इस जीवन व भावी जीवन में भी कल्याण व सुख की उपलब्धि होगी, यह सुनिश्चित है। ईश्वर हम सभी के प्रत्येक कर्म का फल अवश्य देता है। हमारा कोई कर्म उससे कदापि छिपता नहीं है। यदि हम अच्छे कर्म करेंगे तो उसका परिणाम सुख अवश्य मिलेगा। हां, इस जन्म व पूर्वजन्म के बुरे कर्मों का भोग भी हमें भोगना है, इस कारण से भी हमें दुःख भोगने हो सकते हैं। विवेच्य नियम के दूसरे भाग में कहा गया है कि सभी की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए। सबकी उन्नति का अर्थ है कि जो हमसे उन्नति में पीछे हैं वा जो उन्नत नहीं है अपितु बहुत कम उन्नत हैं, उनकी उन्नति में सहायक बनकर व उन्हें उन्नत करके ही हमें अपनी उन्नति समझनी चाहिये। यह भावना देशवासियों में होनी चाहिये। हमें लगता है कि यह भावना अच्छे संस्कारों से ही आ सकती है जिसका आधार वैदिक जीवन पद्धति है। वैदिक संस्कृति में पांच कर्तंव्यों में, ईश्वरोपासना, दैनिक अग्निहो.त्र, माता-पिता-आचार्यों व विद्वान अतिथियों का सेवा-सत्कार व सभी प्राणियों पर दया की भावना व उनके भोजन के सुप्रबन्ध में अपना योगदान देना, इन कर्तव्यों का पालन है।

 विषय से जुड़ी कुछ बातों का संकेत करना उचित होगा। योग दर्शन में सफल जीवन हेतु ईश्वर प्राप्ति के साधनों का आश्रय लेना सूचित होता है। इस कार्य में परिग्रह अर्थात् धनसम्पत्ति का संग्रह बाधक और अपरिग्रह अर्थात् न्यूनतम आवश्यकता के अनुरूप सम्पत्ति वा सामग्री का होना ही उचित बताया गया है। यजुर्वेद के अध्याय 40 के प्रथम मन्त्र में **‘तेन त्यक्तन भुंजीथा, मा गृधः व कस्च स्वित धनम्’** कहकर सावधान किया गया है कि संसारिक पदार्थों का भोग वा संग्रह त्याग पूर्वक अर्थात् न्यूनतम आवश्यकता के अनुसार करो, धन सम्पत्ति आदि किसी भौतिक पदार्थ की लालच मत करो, यह धन व सम्पत्ति परमात्मा की है, वही इसका स्वामी है, मनुष्य तो मात्र भोक्ता है, कम भोगेगा तो कम फंसेगा, अधिक भोगेगा तो अधिक फंसेगा और दण्ड पायेगा। वैदिक संस्कृति का अनिवार्य व सर्वोत्तम कर्तव्य व कार्य यज्ञ वा अग्निहोत्र है। देवपूजा, संगतिकरण व दान इसके अंग हैं। विद्वानों की पूजा वा सेवा-सत्कार करना सभी मनुष्यों वा गृहस्थियों का कर्तव्य बताया गया है। धन कुबेरों को भी सच्चे वैदिक विद्वानों व सच्चे योगियों का सेवा-सत्कार कर सम्पत्ति के सदुपयोग पर उनसे परामर्श करना चाहिये। संगतिकरण में सभी धनवान व निर्धन लोगों को परस्पर संगतिकरण कर आर्य समाज के विवेच्य नियम के अनुसार धन व सुख सुविधाओं का परस्पर आदान प्रदान करना चाहिये। दान तो प्रत्यक्षतः सूचित कर रहा है कि आवश्यकता से अधिक अपनी धन सम्पत्ति को निर्धनों व सत्पात्रों में दान देकर यशस्वी व कीर्तिवान बनों। यह दान हमें इस जन्म व परजन्म में भी सुखों को देने वाला सिद्ध होता है। ऐसा नहीं करेंगे तो दोनों जन्मों में दुःखों को ही भोगेंगे। देश विदेश में कुछ सीमित लोगों के पास ही संसार की सारी व अधिकांश दौलत है जिसने सामाजिक असन्तुलन पैदा किया हुआ है। परमात्मा के इस धन को अपना समझना व अकेले भोग भोगना धनवान लोगों की बहुत बड़ी अविद्या है जो कि उनके दुःखों का कारण बन सकती है। उदारीकरण वा प्राइवेटाइजेशन ने भी देश में गरीबी व आर्थिक समस्याओं को जन्म दिया है। इसका कारण विदेशी वाणिज्य संस्थाओं का देश का धन अपने देशों में ले जाना है। इसका परिणाम भी निर्धन लोगों पर पड़ता है और इसका लाभ धनवानों को ही प्रायः मिलता है। अतः आर्य समाज का नियम कि प्रत्येक व्यक्ति धार्मिक हो और देश के सभी प्रजाजनों की उन्नति में अपनी उन्नति समझे, वर्तमान काल, परिस्थितियों में प्रासंगिक एवं विचारणीय है और हमेशा रहेगा।

 हम इस विषय में अल्पज्ञ हैं परन्तु हमने इस पर चिन्तन किया और उसे इस लेख प्रस्तुत किया है। हमारा इस विषय में किसी प्रकार का कोई आग्रह नहीं है परन्तु हम चाहते हैं कि इस नियम पर विचार होना चाहिये व देश भर में बहस होनी चाहिये। हम देश व समाज के विद्वानों से इस विषय में अपने विचारों को प्रस्तुत करने का आग्रह करते हैं जिससे उन्नति से रहित पिछड़े लोगों को भी उन्नत बनाकर श्रेष्ठ समाज जिसे वैदिक भाषा में आर्य समाज कहते हैं, उसका निर्माण भारत ही नहीं सारे विश्व में किया जा सके।

 **-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः 09412985121**